કક્ષા - 11

વિષય : હિન્દી (પ્રથમ ભાષા)

માધ્યમ : હિન્દી

રાજ્ય સરકારના શિક્ષણ વિભાગ દ્વારા અભ્યાસક્રમમાં મંજૂર કરવામાં આવેલ અને પાઠ્યપુસ્તકમાં સમાવેશ કરેલ

प्रकरण - 1 परम सुख के सोपान

प्रकरण - 2 त्रिवेणी

गुजरात राज्य शाला पाठ्यपुस्तक मंडल
'विद्यायन', सेक्टर 10-ए, गांधीनगर - 382010

1 परम सुख के सोपान

एक गुरु अपने तीन शिष्यों के साथ वनविहार के लिए जाते हैं । वहाँ सैद्धांतिक और प्रायोगिक दोनों तरीके से ज्ञान दृढ हो, इस उद्देश्य से प्रकृत्ति की गोद में ज्ञान प्रदान करना चाहते हैं ? वैदिक साहित्य के कुछ हिस्सों को 'आरण्यक ग्रंथ' कहा जाता है । आरण्यक कुछ उपनिषदों में भी जुडा हुआ है । जैसे कि, 'बृहदारण्यकोपनिषद्' एक ऐसा उपनिषद है । अरण्यक में सहज रूप से अनुभवसिद्ध ज्ञान देना भारतीय – आर्ष परंपरा रही है । उसी परंपरा के कारण हमारा देश ऋषि –संस्कृति और ऋषिसंस्कृति से विश्व में अपनी अद्वितीय पहचान रखता है । भारत देश अपने तत्त्वज्ञान से विशेष प्रसिद्ध है ।

एक गुरु के तीन शिष्य प्रशांत, प्रवृत्त और प्रमोह हैं ? संवाद में गुरु अपने शिष्यों को समझाते हैं कि सत्त्वगुण, रजोगुण और तमोगुण से प्राणीमात्र का जीवन और व्यवहार किस तरह प्रभावित होता है ?

गुरु : बच्चो ! यदि सबका नित्यकर्म पूर्ण हो गया हो तो स्वाध्याय प्रवचन के लिए तैयार होकर आओ । (शब्द कान में पडते ही प्रशांत नाम का एक शिष्य दौड़ता हुआ आता है ।)

प्रशांत : प्राणिपात, गुरुदेव ।

गुरु : आशी:वर्धताम् (आशीर्वाद, खूब प्रगति करो।)

प्रशांत : गुरुदेव! आप तो रोज ''**स्वाध्याय प्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्**'' – (तैत्तिरीयोपनिषद–शिक्षावल्लीा) (स्वाध्याय प्रवचन में आलस्य नहीं करना चाहिए) कहते हैं, फिर भी प्रवृत्त शांतिप्रिय है और प्रमोह एकदम मनमौजी है । कितना भी बोलें, उस पर कोई असर ही नहीं होता है ? एकदम मोटी चमडड़ी है । मुझे रोज उसे दुबारा बुलाने जाना पड़ता है । गुरुदेव ! ''आज्ञा गुरूणां ह्यविचारणीया'' (रघुवंशम् – 14.46) (गुरु की आज्ञा को बिना विलंब लागू करना चाहिए।) आप यह बात प्रतिदिन कहते हैं तो भी यह भैंस के आगे भागवत के समान है। गुरुदेव ! कभी–कभी मेरे मन में विचार आता है कि हमारे गुरु एक ही हैं, हमारा गुरुकुल एक ही है, कार्य एक ही है और उम्र भी समान है, फिर भी तीनों के व्यवहार में इतना अंतर क्यों है ?

गुरु : तुम्हारा प्रश्न अच्छा है । इसका समाधान भगवद् गीता में बहुत अच्छी तरह दिया गया है ।

प्रशांत : गुरुदेव, इस प्रश्न का समाधान भगवद् गीता से मिल जाएगा, ना ।

गुरु : देखो बेटा ! इस ग्रंथ से सभी प्रश्नों का समाधान मिल जाता है ।

प्रशांत : गुरुदेव ! सभी प्रश्नों का समाधान क्या एक ही ग्रंथ से मिल पाना संभव है ? आम के पेड़ से आम तो प्राप्त कर सकते हैं लेकिन बैर–चीकू – सेब आदि सब कुछ तो नहीं ।

गुरु : एक वृक्ष से तो एक ही प्रकार का फल मिल सकता है लेकिन एक पृथ्वी पर जितने प्रकार के बीज बोये जाएँगे उतने ही प्रकार के फल प्राप्त किए जा सकते हैं । इस प्रकार इस ग्रंथ में भी सभी समस्याओं का समाधान है ।

प्रशांत : गुरुदेव, आप तो बहुत दृष्टांत कुशल हैं । कृपया जब तक प्रवृत्त और प्रमोह न आएँ तब तक मेरी शंकाओं का समाधान इस ग्रंथ से खोजें ?

गुरु : तुम तीनों शिष्य एक ही स्थान, एक ही गुरु, एक ही उम्र और एक ही प्रकार का अध्ययन कर रहे हो । फिर भी एक शांत, एक चंचल और एक दीर्घसूत्री या प्रमादी है । उसका मूल कारण मनुष्यों मे रहा गुण है । इन गुणों की संख्या तीन है – सत्व गुण, रजोगुम और तमे गुण । ये तीनोंगुण मनुष्यों में ही नहीं, प्राणियों में भी होते हैं । जिससे सभी के जातिगत गुणधर्म समान होने पर भी व्यक्तिगत गुणधर्म भिन्न होते हैं । इसीलिए प्रत्येक जीव एक–दूसरे से भिन्न है । उदाहरण स्वरूप, हाथियों के झुण्ड में देखें तो एक एकांत में शांति से वृक्ष के नीचे खड़ा है, दूसरा शरीर पर धूल उड़ा रहा है और नहा रहा है तथा लगातार यही कर रहा है, दौड़ रहा है तथा खेलता हुआ दिखाई दे रहा है । जबकि तीसरा हाथी सोता रहता है अथवा पेड़ में दाँत फँसाता रहता है । पहाड़ में सिर मारता है या फिर दूसरे हाथियों के साथ दाँत लड़ाता है । उसके पीछे का मुख्य कारण त्रिगुणों का प्रभाव है । गीताजी में कहा गया है कि–

सत्त्वं रजस्तम इति गुणाः प्रकृतिसम्भवाः ।

निबध्नन्ति महाबाहो देहे देहिनमव्ययम् ॥ (गीता 14.5)

(अर्थात् हे महाबाहो! सत्त्वगुण, रजोगुण और तमोगुण – प्रकृत्ति से उत्पन्न ये तीनों गुण अविनाशी आत्मा को शरीर में बाँधते हैं ।)

सत्त्वं सुखे संजयति रजः कर्मणि भारत ।

ज्ञानमावृत्य तु तमः प्रमादे संजयत्युत ॥ (गीता 14.9)

(अर्थात् हे भारत! सत्त्वगुण सुख में लगाता है, रजोगुण कर्म में और तमोगुण तो ज्ञान को ढँककर प्रमाद की ओर लगाता है ।) यहाँ सुख शब्द का अर्थ उदात्त सुख है ।

ये तीनों गुण जीवमात्र को एक निश्चित कार्य करने के लिए प्रेरित करते हैं । यदि सत्त्वगुण अधिक हो तो तेजस्विता, शांति, सुख और ज्ञान में अभिरुचि होगी । यदि रजोगुण अधिक हो तो वह प्राणी स्नेही, असंतोषी और निरंतर प्रवृत्तिशील या चंचल होता है । जबकि तमोगुणी प्राणी अज्ञानी, आलसी, निद्रालु और मोहयुक्त होता है ।

हाँ, एक बात का ध्यान निश्चित रखें कि वात, पित्त और कफ तीनों में जो अधिक होता है वह स्वास्थ्य को प्रभावित करता है । ऐसा भी देखा गया है कि जिस पर वात का प्रकोप होता है, वह हमेशा साँस की तकलीफ से पीड़ित रहता है । जो पित्त से प्रभावित होता है, वह हमेशा एसिडिटी की समस्या से पीड़ित हो, ऐसा न भी हो और कफ प्रकृत्ति वाला निरंतर खाँसता हो, ऐसा भी नहीं है । आहार –विहार की प्रवृत्ति से प्रभावित होने पर जो अधिक होता है, उसी का प्रभाव दिखाई देता है । इसी प्रकार तीनों गुणों में समझना चाहिए ।

प्रशांत : गुरुदेव! वात, पित्त और कफ में तो हम अपनी जीवनशैली से परिवर्तन ला सकते हैं । इस सत्त्व – रजस और तमस में जो गुण अधिक होगा, वैसा ही व्यवहार रहेगा न ? इसलिए हमारे व्यवहार में साम्य तो संभव ही नहीं है न ?

गुरु : यह प्रश्न बहुत महत्त्वपूर्ण है । यदि हम गीता से सीखें और उस ज्ञान को व्यवहार में लाएँ तो परिवर्तन संभव है । जैसे योग – आयुर्वेद आदि के ज्ञान और क्रिया से रक्तचाप (ब्लडप्रेशर) वगैरह को नियंत्रित किया जा सकता है, इसीतरह गुणों में भी संभव है । केवल जानने मात्र से अच्छी से अच्छी औषधि भी रोगी को स्वस्थ नहीं कर सकती है, उसे शरीर में उतारना पड़ता है तब लाभ मिलता है । वैसे

ही इस ज्ञान को भी आत्मसात करने के बाद ही लाभ मिलता है । **अधीतिबौधाचरण प्रचारणै: नैषधीय चरितम् - 1.4** ऐसा शास्त्र में कहा गया है । **अधीति:** का अर्थ है ज्ञान प्राप्त करना, **बोध:** का अर्थ है समझना, **आचरणम्** का अर्थ है व्यवहार में लाना और **प्रचारणम्** का अर्थ है दूसरे को उपदेश देना । यही ज्ञान का सही तरीका है ।

जो लोग सत्वगुणी होते हैं वे समाज में आदर्श जीवन जीते हैं । उसे हर जगह सम्मान प्राप्त होता है । कारण कि गीता जी में कहा गया है कि **'उर्ध्व गच्छन्ति सत्त्वस्था:'** । जो रजोगुणी होते हैं वे मध्यम प्रकार का जीवन जीते हैं - 'मध्ये तिष्ठन्ति राजसा:' वह मानव तो बन सकता है लेकिन सत्त्वगुणी महामानव बन सकता है । **अधोगच्छन्ति तामसा:** और तमोगुणी अमूल्य जीवन को व्यर्थ एवं उपेक्षित बना देता है । तमोगुणी जीवन उपेक्षित बनता है । इसमें काम-क्रोध और लोभ का अतिरेक विशेष कारण बन जाता है । गीता में कहा गया है कि

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मन: ।

काम: क्रोधस्तथा लोभस्तरमादेतत्त्रयं त्यजेत् ॥ (गीता 16.21)

(अर्थात् काम, क्रोध और लोभ - ये तीन प्रकार के नरक के द्वार आत्मा को नष्ट करने वाले हैं, अर्थात् पतन की ओर ले जाते हैं, इसलिए इन तीनों को त्याग देना चाहिए।)

अवगतम् ? अब समझ गए ?

प्रशांत : हाँ गुरुदेव । अनुगृहीत हूँ । कृतकृत्य हूँ । (इतने में प्रवृत्त और प्रमोह आते हैं।)

प्रवृत्त : प्रणाम गुरुदेव !

गुरु : वर्धताम् (प्रगति हो)

प्रमोह : नमो नम:- गुरुदेव !

गुरु : तेजस्वी भव (खूब तेजस्वी बनो।)

तुम दोनों के आने से पहले मैंने प्रशांत के एक प्रश्न का समाधान करते हुए त्रिगुण का बोध कराया था । **'द्विर्बद्धं सुबद्धं भवति'** अर्थात् एक गाँठ पर एक गाँठ अधिक लग जाय तो वह मजबूत हो जाती है । इसलिए सार कहूँ तो हमारी गतिविधि हमारे गुणों की स्थिति निर्धारित करती है । हमारी सभी गतिविधियाँ सात्त्विक हों, यह उत्तम जीवन की अनिवार्यता है । ये बात तुम्हें भी समझना चाहिए । तुमने मुझे प्रणाम किया । उसमें यदि गुरु के प्रतिनिष्ठा हो और मस्तक के साथ-साथ मन भी झुके तथा 'आचार्यदेवो भव' (तैत्तिरीयोपनिषद्-शिक्षावल्ली) चरितार्थ हो, तो वह प्रणाम सत्त्विक है । समझो, प्रणाम के समय गुरुजी एक सामान्य हमारे जैसे ही मानव हैं । चरण स्पर्श करेंगे तो उन्हें अच्छा लगेगा और वे अच्छे से पढ़ाएंगे । यदि हम ऐसा सोचते हैं कि परीक्षाफल में कृपा दृष्टि रखेंगे तो यह राजस प्रणाम कहलाएगा और प्रणाम केवल दिखावे के लिए करते हैं, नियम है इसलिए करते हैं । यदि प्रणाम करना कष्टप्रद लगता है तो यह तामस प्रणाम कहलाएगा ।

बच्चो, आओ हम अपनी कुछ गतिविधियाँ जानें जिससे व्यवहार में परिवर्तन ला सकें । मानव जीवन परोपकार के लिए है । तेन त्यस्तेन भुञ्जीथा: (ईशावास्योपनिषद्-१) अर्थात् त्याग करके भोग करें, दान करें, मदद करें । यह मदद करने की भी एक निश्चित सात्त्विक रीति बताई गई है ।

दातव्यमिति यद्दानं दीयतेऽनुपकारिणे ।

देश काले च पात्रे च तद्दानं सात्त्विकं स्मृतम् ॥ (गीता 17.20)

(अर्थात् 'दान देना ही कर्तव्य है' ऐसे भाव से योग्य देश, योग्य काल और योग्य पात्र को ध्यान में रखते हुए, प्रत्युपकार न करने वाले व्यक्ति को नि:स्वार्थ भाव से जो दान दिया जाता है, वह सात्त्विक दान है।)

अगर जरूरतमंद मुझसे कहेगा तो मैं दूँगा । भविष्य में मुझे इसके बदले अच्छा लाभ मिलेगा, ऐसा विचार करके दिया गया दान राजस है और अपमान करके, तिरस्कार के भाव से न चाहकर भी दिया गया दान तामस कहलाता है ।

इन सभी गतिविधियों से गुण प्रभावित होता है । दोनों एक-दूसरे पर आश्रित हैं । अब तुम कोई भी मदद करो तो इस बात को ध्यान में रखो ।

प्रमोह : गुरुदेव ! जिस तरह दान की क्रिया के तीन प्रकार हैं और उन क्रियाओं से गुण प्रभावित होते हैं। उसी तरह भोजन के तौर - तरीके भी भिन्न-भिन्न हो सकते हैं ? आहार के भी ऐसे प्रकार हो सकते हैं ?

गुरु : तुम्हारा पूछना यथार्थ है । तुम्हारी आयुवर्ग के सभी छात्रों को विशेष करके इस बात को समझना चाहिए । पहले तो हम आहार का अर्थ भोजन करते हैं, जो इतना ही पर्याप्त नहीं है । परंतु आ ह्रीयते गृह्याते इन्द्रियै: इति आहार । जो ज्ञानेन्द्रिय से ग्रहण किया जा सकता है, वह सब आहार है । अत: क्या बोलें, क्यां खाएँ-पिएँ, क्या सूँघें और क्या स्पर्श करें - ये सब विचारणीय है, कारण कि ये सब आहार कहलाते हैं । ये सब जीवन को प्रभावित करते हैं । इनके तीन-तीन प्रकार होते हैं । इसीलिए कहा गया है कि -

आहाररत्त्वपि सर्वस्व त्रिविधो भवति प्रिय: ॥ (गीता 17.7)

हद्या आहारा: सात्त्विकप्रिया: ॥ (गीता 17.8)

मन को प्रसन्न करे वह आहार सात्त्विक कहलाता है ।

यातयामं गतरसं पूर्ति पर्युषितं च यत् ।

उच्छिष्टमपि चामेध्यं भोजन तामसप्रियम् ॥ (गीता 17.10)

(अर्थात् जो भोजन अधपका और अधकच्चा, सूख गए रस का, स्वभाव से ही दुर्गंधयुक्त, बासी और जूठा है तथा जो अपवित्र भी है, वह भोजन तामसी मनुष्य को अच्छा लगता है।)

ये सभी आहार गुणों को प्रभावित करते हैं । अत: जिसे सात्त्विकता बनाए रखना हो, उत्तम जीवन और उत्तम स्वास्थ्य बनाए रखना हो, उसे यह - वह, जहाँ-तहाँ, जब - तब, जैसा - तैसा, ऐसे ही कुछ भी नही खाना, देखना या सुनना नहीं चाहिए । दिन-प्रतिदिन स्थूलता-मंदता बढ़ रही है और तितिक्षा-स्वस्थता घट रही है । अत: जंक फूड और कृत्रिम पेय पदार्थ किसी भी हालत में आहार में नहीं लेना चाहिए ।

बच्चो, अब वैश्वदेव (भोजन) का समय हो गया है । तुम लोग सात्त्विक भोजन करके, नाममात्र वामकुक्षि करके अध्ययन के लिए वापस आओ । तब तक मैं भी अपना नित्यकर्म कर लूँ और अल्पाहार भी ले लूँ ।

गुरुदेव की सूचनानुसार छात्र भोजन के लिए जाते हैं और गुरुकुल के नियमानुसार छात्र भोजन करने से पहले दो श्लोक बोलकर प्रार्थना करते हैं और फिर प्रसाद ग्रहण करते हैं -

१. **ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम् ।**

ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्म समाधिना ॥ (गीता 4.24)

२. **अहं वैश्वनरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रित: ।**

प्राणापानसमायुक्त: पचाम्पन्नं चतुर्विधम् ॥ (गीता 15.14)

१. (ब्रह्मयज्ञ कि जिसमें अर्पण अर्थात् स्स्तुवा आदि साधन भी ब्रह्म है, हवन करने योग्य द्रव्य भी ब्रह्म है, ब्रह्मरूपी होता द्वारा ब्रह्मरूपी अग्नि में आहुति रूपी क्रिया भी ब्रह्म है और सर्वत्र ब्रह्मबुद्धि करने योग्य ब्रह्मकर्म में स्थित रहने वाले योगी को मिलने वाला फल भी ब्रह्म ही है ।)

२. (सभी प्राणियों के शरीर में स्थित मैं ही प्राण और अपान से युक्त वैश्वानर अग्नि स्वरूप होकर चार प्रकार के अन्वन को पचाता हूँ।)

(थोड़ी देर बाद सभी कुटीर में अध्ययन के लिए एकत्र होते हैं ।

शिष्य : गुरुदेव, प्राणिपात ।

गुरु : कल्याणमस्तु । (कल्याण हो ।)

प्रशांत : गुरुदेव, आप इस उम्र में भी तप या साधना करते ही रहते हैं । आप तो कितने तपस्वी हैं ।

गुरु : भगवद् गीता कहती है कि सभी तपस्वी बन सकते हैं ।

शिष्य : गुरुदेव, ऐसा है तो बताइए, हमें भी तपस्वी बनना है ।

गुरु : बच्चो ! सादा जीवन जीना, अहिंसा आदि का पालन करना, पवित्रता बनाए रखना । ये सभी शारीरिक तप कहलाते हैं । सत्य बोलना, प्रिय बोलना, विवेकपूर्ण बोलना वाणी का तप कहलाता है । मन से प्रसन्न रहना, शांत और सौम्य रहना, संयमी बनना मानसिक तप है । इस प्रकार यदि हम सात्त्विक जीवनशैली से जीते हैं तो हमारा जीवन एक उत्तम तप है ।

प्रमोह : गुरुदेव, इस तप का फल क्या है ?

गुरुदेव : बेटा, फल की अपेक्षा से किया गया तप राजस बन जाता है । यह सब मेरे कहने से दबाव में करोगे तो यह तामस तप होगा । परंतु निरपेक्ष भाव से करोगे तो यह सात्त्विक तप बन जाएगा और तुम्हें उत्तम मनुष्य बनाएगा । तुम्हारे जीवन को भव्य और दिव्य बनाएगा ।

शिष्य : करिष्ये वचनम् ! हम सब आपके कथनानुसार जीवनशैली का पालन करेंगे । सात्त्विक गतिविधियों से हम सच्चे शिष्य बनेंगे ।

गुरुदेव : 'गुरुं प्रकाशयेत् स शिष्यः' जो गुरु की कीर्ति फैलाए और उनकी पहचान बने वही सच्चा शिष्य है । तुम सब ऐसा ही बनो ।

आइए, सब वोले –

सर्वोपनिषदो गावो दोरधा गोपालनन्दनः ।

पार्थो वत्सः सुधीर्भोक्ता दग्धं गीतामृतं स्मृतम् ॥ (गीतामाहात्म्य-6)

(अर्थात् सभी उपनिषद् गाय हैं । परमात्मा कृष्ण दोहकर्ता हैं । अर्जुन वत्स (बछड़ा) हैं । विद्वान भोक्ता हैं और गीतारूपी अमृत दूध है ।)

(अस्तु शम् ! सबका कल्याण हो ।)

शब्दार्थ

1. **दृष्टांत** उदाहरण **त्रिविध** तीन प्रकारवाला **वै** **वैश्वानर** वैश्वानर नामक **अग्नि द्विबद्ध** दो बार बँधा **सुबद्ध** अच्छी तरह से बँधा

स्वाध्याय

1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर संक्षेप में दीजिए :

1. गुरु की आज्ञा कैसी कहलाती है ?
2. गुण कितने हैं ? किस गुण का क्या - क्या प्रभाव पड़ता है ?
3. तीनों गुणों की सामान्य पहचान क्या है ?
4. काम, क्रोध और लोभ का त्याग क्यों करना चाहिए ?
5. कौन - सा तप सात्त्विक तप है ?

2. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए :

1. प्रशांत, प्रवृत्त और प्रमोह में कौन-सा गुण प्रधान है ? आपको ऐसा किस कारण से लगता है ?
2. 'अधितीबोधाचरणप्रचारणैः।' समझाइए ।
3. दान के तीन प्रकारों को अपने अनुभव के उदाहरण द्वारा समझाइए ।
4. कोष्टीक पूर्ण कीजिए -

आहार के प्रकार	गीता के किस श्लोक में उल्लेख है ?	स्पष्टीकरण
सात्त्विक	17.8	
राजसी		
तामसी		

विद्यार्थी - प्रवृत्ति

- अनुष्टुप छंद का गान करना सीखना ।
- आहार विषयक प्राप्त जानकारी को दैनिक आहार में लागू करना ?
- भोजन प्रारम्भ करने से पहले बोले जाने वाले श्लोक कंठस्थ करना ।

शिक्षक की भूमिका

- सात्त्विक भोजन वगैरह की समझ विद्यार्थी अपने जीवन में उतारे, इसके लिए बार-बार उनसे होने वाले लाभ समझाना ।
- श्लोकों का शुद्ध उच्चारण और लयबद्ध गान सिखाना ।
- अध्याय - 17 और 18 में किन-किन बातों के लिए सात्त्विक, राजसी और तामसी थे तीन-तीन प्रकार समझाए गए हैं, स्पष्ट करना ।

●●●

2 त्रिवेणी

शाम का समय है । शाम ढल रही है । कलरव करते हुए पक्षी भी अपने घोसलों में लौट रहे हैं । उसी समय कॉलेज में प्रोफेसर पद पर कार्यरत भार्गवभाई घर लौटते हैं । भार्गवभाई का पुत्र धौम्य और पुत्री धीमहि विद्यालय में पढ़ते हैं । दोनों बच्चे गृहकार्य कर रहे हैं । भार्गवभाई सहज ही धौम्य की गुजराती विषय की पुस्तक उठा लेते हैं । पन्ना खोलते ही उनकी नजर नरसिंह मेहता के इस पद पर पड़ती है – अखिल ब्रह्मांड में एक तू श्रीहरि ।

भार्गवभाई को यह पद पसंद होने से वे भावपूर्ण हृदय से गाने लगे । पिता जी को गाते देख दोनों बच्चे उनके पास आकर बैठ गए । दो पंक्तियाँ गाने के बाद भार्गवभाई ने कहा, ''अरे ! धौम्य आपका पाठ्यक्रम बहुत अच्छा है, हमारे भक्त कवि नरसिंह मेहता का इतना सुंदर पद ।

(अब पिता, पुत्र और पुत्री के बीच नरसिंह मेहता के पदों को लेकर संवाद शुरू हो गया ।)

धौम्य : पिताजी, मैंने सुना है कि नरसिंह मेहता भगवान के बहुत बड़े भक्त थे ।

भार्गवभाई : हाँ बेटा, नरसिंह मेहता ने तो अपने एक पद में भक्ति को महत्त्व देते हुए यहाँ तक कहा है कि, 'भूतल भक्ति पदार्थ मोटुं, ब्रह्मलोकमाँ नाहीं रे ।' अर्थात् पृथ्वी पर भक्ति से बड़ी कोई चीज नहीं है, जो ब्रह्मलोक में भी नहीं है ।

धीमहि : पिताजी, भक्ति यानी क्या ?

भार्गवभाई : बेटा, भक्ति यानी ईश्वर के साथ आत्मिक जुड़ाव । भक्ति यानी केवल बाहरी व्यवहार ही नहीं, बल्कि अपनी कर्मकुशलता ईश्वर को समर्पित करना । हमारी कर्मकुशलता को वांछनीय बनाने के लिए भक्ति के नवधा (नौ) सोपानों का वर्णन किया गया है ।

श्रवणं कीर्तन विष्णोः स्मरणं पादसेवनम् ।

अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम् ॥ (श्रीमद्भागवतमहापुराणे - 7.5.23)

(अर्थात् श्रवण, कीर्तन, स्मरण, सेवा, अर्चन, वंदन और भगवान को स्वामी मानकर दासभाव रखना, भगवान के साथ मित्रभाव रखना और भगवान को ही सर्वस्व मानकर आत्मनिवेदन करना ।)

धौम्य : पिताजी, भगवान की भक्ति करने के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण साधन क्या है ?

भार्गवभाई : भगवान की भक्ति के लिए श्रद्धा ही सबसे महत्त्वपूर्ण है । वैसे तो भगवद् गीता कहती है कि श्रद्धा के बिना किया गया तप, दान या कर्म व्यर्थ है । हम जो कुछ भी करते हैं, उसमें श्रद्धा आवश्यक है । परंतु भगवान की भक्ति के लिए तो यह अत्यंत अनिवार्य है । भगवद् गीता के बारहवें अध्याय में अर्जुन के प्रश्नों के उत्तर देते हुए भगवान ने भक्तिमार्ग में श्रद्धा के महत्त्व को बताते हुए कहा है –

मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते ।

श्रद्धा परयोपेतास्ते मे युक्ततमा मताः ॥ (गीता 12.2)

(अर्थात् जो मुझमें मन लगाकर परम श्रद्धा से नित्य मेरी उपासना करता है, वह मेरा उत्तम भक्त है ।)

धीमहि : पिताजी, भगवद् गीता के अनुसार हम कैसा जीवन जिएँ तो भगवान को पसंद आएगा ?

भार्गवभाई : बेटा, आदर्श जीवन जीने के लिए यह बहुत ही सुंदर प्रश्न है । माता-पिता और बडों की सेवा करना, शिक्षकों का सम्मान करना, सत्य बोलना, ईश्वर में श्रद्धा रखना, आसपास के लोगों की मदद करना, नियमित अध्ययन करना, जली सोना और जल्दी उठना, सादा और सात्त्विक भोजन लेना, ईर्ष्या या दिखावा नहीं करना, मन साफ रखना, सफाई और स्वच्छता को महत्त्व देना तथा पर्यावरण की रक्षा करना । इस प्रकार का जीवन जिएँ तो हम ईश्वर को प्रिय होंगे ।

अमानित्वमदम्भित्वमहिंसा क्षान्तिरार्जवम् ।

आचार्योपासनों शौचं स्थैर्यमात्मविनिग्रहः ॥ (गीता 13.8)

धौम्य : पिताजी, ज्ञान और भक्ति के बीच क्या संबंध है ?

भार्गवभाई : बेटा, ज्ञान और भक्ति एक दूसरे के पूरक है । जब कोई ज्ञानी समग्र जगत और खुद के आधार रूप में भगवान को देखता है तब वह उस भगवान से अलग कैसे रह सकता है ? वह ज्ञान के माध्यम से ही भगवान के साथ जुड़ जाता है । हमारे यहाँ ऐसे कई ज्ञानी हुए हैं, जिन्होंने अपने ज्ञान को भगवान के साथ जोड़कर भक्तियोग प्राप्त किया । जैसे कि आदिशंकराचार्य, रामानुजाचार्य, वल्लभाचार्य, चैतन्यमहाप्रभु, रमण महर्षि, श्री अरविंद, श्रीमद राजचंद्र आदि । ये सभी लोग बहुत विद्वान और शास्त्रवेत्ता होने के साथ-साथ भक्ति और ज्ञान से जुडे हुए थे । ज्ञानी भक्तों के लिए भगवद् गीता कहती है -

तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते ।

प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं स च मम प्रियः ॥ (गीता 7.17)

(वह ज्ञानी जिसकी भक्ति भगवान में एकात्मभाव से स्थित है अर्थात् जो देखता है कि सभी प्राणियों में एक ही भगवान का वास है, उस ज्ञानी को भगवान प्रिय है और ऐसा ज्ञानी भगवान को बहुत प्रिय है ।)

धीमहि : पिताजी, ज्ञान किसे कहते हैं ?

भार्गवभाई : यह संपूर्ण ब्रह्मांड विविध प्रकार के 24 तत्त्वों से बना है । इन तत्त्वों के समूह को भगवद् गीता में क्षेत्र के रूप में जाना जाता है और जो इसे पहचानता है, उसे क्षेत्री कहा जाता है । दूसरे शब्दों में कहूँ तो क्षेत्र यानी हमारा पिंड अर्थात् शरीर । अपने यहाँ कहा गया है कि पिंडे सो ब्रह्मांडे ''यानी जो पिंडरूप शरीर में है वही समग्र ब्रह्मांड में है । इस शरीर को हमारी अंतरात्मा जानती है, वही भगवान का अंश है और उसे ही क्षेत्री कहा गया है । इस क्षेत्र और क्षेत्री का ज्ञान ही ज्ञान कहलाता है ।

क्षेत्रज्ञों चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत ।

क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानं यत्तज्ज्ञानं मतं मम ॥ (गीता 13.2)

धीमहि : पिताजी, भगवान हर जगह मौजूद हैं तो क्या सभी भगवान को अपने अंदर मौजूद पाते है ।

भार्गवभाई : नहीं बेटा, भक्ति जितनी प्रबल होगी भगवान की अनुभूति उतनी ही अपने अंदर होगी । जिस तरह सूर्य की किरणों में अग्नि मौजूद है, परंतु यह अग्नि प्रत्यक्ष आग जैसी नहीं दिखाई देती है । जब कोई बिलोरी काँच (आवर्धककाँच) लेकर अग्नि की किरणों को एकत्रित करता है तो बिलोरी काँच के सामने रखा कागज जलने लगता है । इस प्रकार जब कोई मनुष्य अपनी भक्ति को दृढ़ करता है, तब उसकी प्रबल भक्ति से भगवान उसी तरह प्रत्यक्ष दिखाई देते हैं, जिस तरह बिलोरी काँच से सूर्य की अग्नि ।

धौम्य : पिताजी, भगवद् गीता में कर्मयोग की भी बात आती है । तो कर्म का भक्ति के साथ कोई संबंध है ?

भार्गवभाई : हाँ बेटा । भगवद् गीता के अनुसार कोई भी मनुष्य क्षणमात्र भी बिना कर्म किए नहीं रह सकता है ।

न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत् । (गीता 3.5)

कर्म के बिना तो जीवनयात्रा भी रुक जाएगी । परंतु हमें अवश्य करना पड़े ऐसा कर्म यदि अपनी लौकिक इच्छाओं के बदले भगवान को समर्पित हो जाए तो ऐसे कर्मों.से भी भक्तियोग की प्राप्ति हो सकती है । अपने यहाँ रामकृष्ण परमहंस, कबीर, संत तुकाराम, रोहीदास, जलाराम बापा, भक्त नरसिंह मेहता जैसे कई संत हुए हैं, जिन्होंने अपने कर्म को भगवान के साथ जोड़कर भक्तियोग प्राप्त किया था । वे इस संसार में ही रहे और अपने लौकिक कार्य को करते हुऐ भगवद् पद की प्रापति किया । अत: भगवद् गीता में कहा गयै है –

यत: प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिद ततम् ।

स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानव: ॥ (गीता 18.46)

(अर्थात् जिस भगवान से यह समग्र जगत उत्पन्न हुआ है और जिससे समग्र जगत की प्रवृत्तियों का विस्तार हुआ है, उसे अपने कर्म अर्पण करके मनुष्य परम सिद्धि को प्राप्त कर सकता है ।)

धौम्य : पिताजी, भगवान को कैसा भक्त पसंद है ?

भार्गवभाई : यह बहुत अच्छा प्रश्न है । कवि नरसिंह मेहता की वैष्णवजन भक्तिपद के बारे में तो तुम जानते ही होगे । इसके अनुसार भगवद् गीता भी कहती है कि जो प्राणी द्वेष भाव से मुक्त हो, जो सबके प्रति मैत्री और दयाभाव रखता हो, जो सदा संतोष रखता हो, जिसने भगवान में द्रढ़ निश्चय करके अपना मन और बुद्धि भगवान को अर्पण कर दिया हो, ऐसा भक्त भगवान को खूब प्रिय होता है । जो किसी भी जीव को उत्तेजित नहीं करता और स्वयं भी किसी से उदिग्न नहीं होता तथा जो दूसरों की उन्नति देखकर ईर्ष्या नहीं करता और सभी भय से मुक्त हो, ऐसा भक्त भगवान को प्रिय होता है । इसके अतिरिक्त जो मान–अपमान सुख–दु:ख, निंदा–स्तुति में समान भाव रखने वाला हो यानी कि मान से जिसे मद न हो, अपमान से जो दु:खी न हो, अपनी निंदा से तो विचलित न हो और प्रशंसा से फूल न जाए, ऐसा स्थिर बुद्धिवाला भक्त भगवान को प्रिय होता है । इसीलिए तो –

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्र:करूण एव च ।

निर्ममो निरहहंकार: समदु:खसुख क्षमी ॥ (गीता 12.13)

(अर्थात् जो सभी भूतों में द्वेषभाव रहित है, तो बिना स्वार्थ के सबका प्रेमी और जो बिना किसी प्रयोजन के दयालु है तथा जो ममत्व रहित, अहंकार रहित, सुख–दु:ख की प्राप्ति में समान और क्षमाशील है ।)

यस्मान्नोदिजते लोको लोकोन्नोद्विजते च य: ।

हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो य: स च मे प्रिय: ॥ (गीता 12.15)

(अर्थात् जिससे कोई भी जीव उद्वेग (संतप्त) को प्राप्त नहीं होता, जो स्वयं भी किसी जीव से उद्वेग का अनुभव नहीं करता तथा जो हर्ष, अमर्ष (क्रोधरहित), भय और उद्वेग आदि से रहित है, वह भक्त मुझे प्रिय है ।)

धौम्य : पिताजी, आपने आज भक्ति के साथ भगवद् गीता को जोड़कर बहुत ही अच्छी बात की ।

धीमहि : हाँ, पिताजी मुझे भी बहुत मजा आया ।

धौम्य : पिताजी, भगवद् गीता सुनकर ऐसा लगता है कि हमें यह ग्रंथ अवश्य पढ़ना चाहिए, क्योंकि इसमें हमारे जीवन को बेहतर बनाने वाली बातें कही गई हैं ।

भागर्वभाई : हाँ बच्चो, श्रीमद भगवत् गीता नियमित पठन-पाठन करने योग्य ग्रंथ है ।

स्वाध्याय

1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर एक-एक वाक्य में दीजिए :

1. धौम्य की गुजराती विषय की पाठ्यपुस्तक में भार्गवभाई ने क्या देखा ?
2. भक्ति के कोई भी पाँच प्रकार बताइए ?
3. भगवान के प्रिय भक्त के पाँच गुण बताइए ?
4. विश्वव्यापी भगवान को अपना कर्म कैसे समर्पित करना चाहिए ?

2. नीचे दिए गए 'अ' विभाग के वाक्यांश को 'ब' विभाग के साथ उचित ढंग से जोड़कर लिखिए :

	अ		ब
1.	भक्ति अर्थात्	1.	कण-कण में देखता है ।
2.	श्रद्धा भक्ति अर्थात्	2.	भगवान के साथ आत्मिक जुड़ाव ।
3.	ज्ञानी व्यक्ति भगवान को	3.	अनिवार्य है ।

विद्यार्थी - प्रवृत्ति

- श्लोकों का शुद्ध उच्चारण करने तथा सुरबद्ध ढंग से गाने का प्रयास करना ।
- पाठ को समझकर उस पर निबंध और वक्तृत्त्व तैयार करना ।
- भगवद् गीता की पुस्तिका में श्लोकों का अनुवाद देखना और पाठ से संबंधित प्रश्नों को तैयार करके अपने शिक्षक से पूछना ।

शिक्षक की भूमिका

- विद्यार्थियों के समूह में राग और लय में श्लोकों को गाने का अभ्यास करवाना ।
- आपकी कक्षा में अच्छी लय में गाने वाले विद्यार्थियों को अन्य विद्यार्थियों के बीच गवाएँ और उन्हें प्रोत्साहित करें ।
- कक्षा में श्लोकगान और श्लोकपूर्ति की कसौटी आयोजित करना ।

- आदि शंकराचार्यजी, स्वामी चैतन्य महाप्रभु, रमण महर्षि, श्री अरविंद, राजा जनक, स्वामी रामतीर्थ, रामकृष्ण परमहंस, संत कबीर, संत तुकाराम, संत रोहीदास, संत जलाराम बापा, संत नरसिंह मेहता जैसे ज्ञानी और भक्त पुरुषों के जीवनचरित्र पर संक्षेप में चर्चा करना ।
- स्वामी विवेकानंद के कर्मयोग, विनोबा भावे के गीता प्रवचनों का अध्ययन करें और उनके बारे में संक्षेप में बात करना ।
- जो शिक्षक मित्र भक्तियोग का गहन अध्ययन करना चाहते हैं, उन्हें श्रीमद् भगवद् गीता के बाराहवें अध्याय का पठन करना चाहिए ।
- भक्त कवियों के सिद्ध पदों के उपलब्ध ऑडियो – वीडियो का उपयोग करना ।

●●●

नोंध

नोंध

नोंध